इत्यादि

निधि धवन

HINDUस्तानी

इत्यादि

2024
कॉपीराइट © लेखक : डॉ० निधि धवन

सभी अधिकार सुरक्षित।

इस प्रकाशन का कोई हिस्सा पुनः पेश नहीं किया जा सकता है एक पुनर्प्राप्ति प्रणाली में संग्रहीत, न ही किसी भी रूप में प्रेषित और न ही किसी भी तरह से, प्रकाशक से पूर्व लिखित अनुमति के बिना और न ही कवर के किसी भी रूप में परिचालित किया जा सकता है।

लेखक और प्रकाशक विशेष रूप से किसी भी दायित्व, हानि या जोखिम, व्यक्तिगत या अन्यथा, जो इस पुस्तक की किसी भी सामग्री के उपयोग के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से परिणामो की सभी जिम्मेदारी को अस्वीकार करते हैं।

ISBN: 978-81-19525-64-5

प्रकाशक
कार्तिक राज कुशवाह

工場 kojo press
IN PURSUIT OF QUALITY

4760/61, ''साईं सरोवर'', दूसरी मंजिल
23, अंसारी रोड, दरियागंज
नई दिल्ली – 110002
kojopress88@gmail.com
www.standardsmedia.com
Ph.: 011-23264946, 43586946

छायाचित्र
डॉ० संजय धवन

कवर डिजाइन
मयंक चौधरी

प्रस्तावना

≋≋≋≋≋≋≋≋≋≋≋≋

‘इत्यादि’ पर अनुशंसा-प्रशंसा इत्यादि

--अशोक चक्रधर

डॉ. निधि धवन मूलतः कर्ण और कंठ की डॉक्टर हैं।

कान जो सुनते हैं। कंठ जो बोलता है। चिकित्साकर्म के साथ, वे अपनी कला के क्षेत्र में दिल-दिमाग़ के भाव-लोक और कल्पना-लोक के ज़रिए, सुनती-बोलती भी हैं। आभ्यंतरीकरण और बाह्यीकरण की इस प्रक्रिया से अंतर्लोक में बहुत सारे ‘इत्यादि’ एकत्र होकर कविताओं में ढलते जाते हैं।

उनके सुयोग्य सहचर डॉ. संजय धवन चक्षुओं के डॉक्टर हैं, जो कैमरे की आंखों से सब कुछ को प्रत्यक्ष कर देते हैं। उनके पास भी ‘इत्यादियों’ को देखने की कला है।

समकालीन साहित्य में प्रकाशित अथवा सोशल मीडिया पर पोस्टित सामग्री को देखें तो पाते हैं कि हमारे देश की नारी की अभिव्यक्ति का स्वर बदल रहा है। कविता अपना एक नया रूपाकार निर्मित कर रही है। मैं मानता हूं कि कविता के बुनियादी तत्व दिल और दिमाग में रहते हैं। साथ में याह भी मानता हूँ कि दिल और दिमाग अलग नहीं होते। दिमाग में एक दिल होता है और दिल में एक दिमाग। उनके माध्यम से जो रचनाएं निकलकर आती हैं वे दिलात्मक-दिमाग या दिमागात्मक-दिल से आती हैं और हमारे अंतर्मन को छू जाती हैं।

आप क्या सुनें, क्या न सुनें, ये आपके कर्णरंध्र तय नहीं करते, उनको खुला रखने और बंद रखने के आदेश देने वाला दिमागात्मक-दिल होता है और कंठ से निकल कर बाहर क्या आए, यह आदेश देने वाला दिलात्मक-दिमाग़ होता है।

मुझे डॉ. निधि धवन की कविताओं ने श्रवण, दर्शन और वाचन के साथ स्पर्शन भी दिया। दिल और दिमाग को छूने वाला। निधि की कविताओं के बारे में बात आगे बढ़ाऊं, उससे पहले अपनी कुछ पंक्तियां सुनाता हूं--

तट ने तुम्हें नहीं बुलाया लहरो,
कुलांचती क्यों हो?
पवन ने कोई गीत नहीं गाया डालियो,
नाचती क्यों हो?
दोनों और भी झूमने लगीं हर्ष से,
मिलकर बोली—'स्पर्श से'।

कविता छूने का काम करती है, अपने कौशल से तट को और दूसरे के कौशल से डालियों को।

दूसरे का कौशल पुरुष का है। लहर का कौशल स्त्री का है।

अगर वे छुअन की भाषा जानें तो देखना, सुनना और वाचन इन सबमें एक नई रचनात्मकता का आविर्भाव होता है। सृजन का सृजन। और वह इतना वैविध्यपूर्ण होता है कि आपको लगेगा यह 'इत्यादि' है। इसमें आदि भी है, अंत भी है००० और बीच के पतझर और बसंत भी हैं।

पहली ही कविता, 'प्रत्यक्ष न मांगे प्रमाण' एक छवि-चित्र बन गया है। सब कुछ सामने है। छायाकार झूठ बोल सकता है, छाया-चित्र नहीं। एआई का ज़माना है, कई बार छायाचित्र भी भ्रमित करते हैं। चोंच टेढ़ी किए झुका हुआ बगुला मछली को देख रहा है या अपने अंदर उछली किसी लहर को, प्रत्यक्ष होते हुए भी, आप कह नहीं सकते। फिर भी शीर्षासन लगाकर तो नौ और छह का अंतर समझ में न आएगा। कुछ का कुछ दिखाई देगा। सब उलट-पुलट हो जाएगा, यानी, प्रत्यक्ष भी प्रमाण नहीं है।

देखने की प्रक्रिया, उसके संवेदनात्मक उद्देश्य और उसके मन का समाजशास्त्र ही बता सकती है। खुली थी आंखें, खुला था दिल, देखने समझने को मुंह दोनों ने किए बंद, तो सुलझने के बजाए, उलझना ही परिणाम निकलेगा। कोई किसी बात की सफाई क्यों दे? प्रत्यक्ष को भी जब प्रमाण की आवश्यकता पड़ने लगे, तो दृष्टि-पथ साफ करना होगा। चश्मे उतारने होंगे। फिर भी कोई न माने, तो उसके सुनने का शुक्रिया और सबकी ओर से सबको प्रणाम।

यह मैंने पहली कविता का पदान्वय भर किया है। उनके पद्य को गद्य बनाया है। ऐसे ही कुछ अन्य कविताओं के साथ सुलूक करता रहूँ और आगे चलता चलूँ, तो पाता हूं कि हमारी ज्ञानेन्द्रियों की सारी गतिविधियों को निधि एक दिशा देती हैं और कहती हैं कि किताबें ही नहीं, चेहरे भी पढ़े जाते हैं। मसला वही है कि चेहरे पढ़ते समय कोई चूक न हो।

'प्रत्यक्ष' अगर यक्ष प्रश्न छोड़ता है तो किसी कक्ष में जाकर आत्मावलोकन करना चाहिए। रहने का हुनर आना चाहिए। नदी तो सिर्फ रास्ते बदलती है। धरती, सूरज, आकाश, पाताल सब हैं यहीं, सिर्फ मौसम बदलते हैं। फिर दिखाई देता है मुझे एक झुर्रीदार चेहरा। जिसकी आंखों में कितने सारे अपने हैं, जिनके कारण सपने बुझ चुके हैं।

वे दीप्ति को ढूंढ रही हैं।

और सच्ची बात यही है कि भाव गम के हों या खुशी के, नयनों की भाषा में अभिव्यक्त हो जाते हैं, अपनी चंचलता से, अपने आंसुओं से या चितवनों से।

इस पुस्तक के रूप में डॉक्टर दंपति ने मिलकर, एक के बाद एक, अद्भुत प्रयोग किए हैं। श्वेत-श्याम छायाचित्रों के साथ कविता पढ़ो तो उसके अन्य बहुत सारे अर्थ उजागर होते हैं। और कविता पढ़कर छायाचित्र देखो तो छायाचित्र बोलने लगते हैं।

अब सारी कविताओं को मैं आपके लिए छोड़ता हूं। बस इतना कहता हूं कि संवेदनशीलता, संबंधों की संपन्नता और समय की विपन्नता, साथ-साथ चलने के मानी बदल देते हैं। कदम से कदम ही नहीं, जीवन की सड़क पर दिल से दिल मिलाकर चलना होता है। क्षमा का समाजशास्त्र सीखना होता है। एहसास के पतझरों से टकराना होता है।

एकांत को कंठ की फुसफुसी पुकार से रंगों में बदलना होता है। शब्दों की बैसाखी नहीं, शब्दों की साख से काम चलाना होता है। अपने-अपने उजाले और अंधेरे को इत्यादियों के हवाले नहीं करना होता। बल्कि समझना होता है।

आप पढ़िए ये किताब। ग्रेंड सेंट्रल पर लगी हुई घड़ी सिर्फ न्यूयॉर्क का टाइम बताती है। लेकिन समय की सुईयां तो हर देश में घूमती हैं। सूरज हर जगह अपनी छायाएं और समय का मानक बदलता है। जबकि कहते हैं कि घूमती तो धरा है। प्रतीकों, बिंबों और अपने शब्दों की अर्थछवियों के साथ चेतना की पुकार करती हुई कविताएं जो मुसाफिरों को जगाती हैं, प्रतीक्षा करती हैं कि वे लैंडस्केप मोड में हैं या पोर्टेट में। उनके देखने की शैली क्या है? उनके दिल के गीत कैसे नृत्य करते हैं? और धीरे-धीरे वासंती हवा कर्णरध्रों में कैसे एक मधुर गूंज पैदा करती है?

इस पुस्तक को तसल्ली से पढ़िएगा। कविताओं के साथ चित्रों को, पुस्तक की आवश्यकताओं के साथ नहीं, पुस्तक के आकार-प्रकार के अनुरूप नहीं, बल्कि इस तरह कि वे किस तरह रखे जाएं कि ज्यादा बोलें। इसके लिए मैं डॉ. संजय को बधाई देता हूं। हिंदी में एक परिपक्व कवयित्री के अभ्युदय का स्वागत करता हूं। मेरी जानकारी में, वे अभी तक अंग्रेजी में ही लिखती रहीं हैं, अब हिंदी में भी उन्होंने अपना परिपक्व लेखन हमारे सामने पड़ोस दिया है।

संबंधों, तनावों, विकल्पों में भी जहां सन्नाटा गूंजता है, वहीं नग़मे भी।

खंडहर भावनाओं के हों या पत्थरों के, एक औसत अभिशाप हैं। दो लोकों के बीच में लटके-लटके। और छोड़ जाते हैं सवाल, जिन्हें निधि की अनेक कविताओं से निकालें तो एक नई कविता बन सकती है--

औसत से उठकर ही तो उड़ पाओगे।
इसलिए उठो, जागो, भागो।
तुम ही हो देव अखंड।
प्रकृति, प्रेम, प्रेम के झरोखे,

दर्पण के तर्पण।
मैं मायूस नेत्रों से अपने सपनों को
साकार करने की विडंबनाओं में
झूलती हुई निगाहों के साथ
अपनी सहेली से कहती हूँ
तुम नायिका हो।
रेत की चित्रशाला में
अपनी उंगलियों से लिखो। पहाड़ से नहीं,
ठोकर तो पत्थरों से लगती है।

पहाड़ तो खुद रास्ता बनाते हैं।
चलते-चलते चढ़ जाते हैं।

वाह! डॉ. निधि धवन आपका ये शब्द संयोजन तेज़ी से ध्यान खींचता है। आपको सोचने को बाध्य करता है और बताता है कि संकलन की कवयित्री अपनी जो भी कहानी अपने कंठ से सुनाती हैं, उससे अनेक कान सुनकर प्रेरित हो जाते हैं। दिल और दिमाग के संयुक्त भाव में सौंदर्य की अनुभूति करते हैं।

मुझे उम्मीद है कि यह पुस्तक उन सबका स्वागत पाएगी, जो वर्तमान और आगत के बीच में संबंधों का बदलना देख रहे हैं और फिर भी निराशा का बोध नहीं, कविताओं के रूप में एक सकारात्मकता है, जो जीवनधारा की गीली गतिमयता के ऊपर किया हुआ झिलमिलाता स्वर्णिम हस्ताक्षर है। शुभकामनाओं के रूप में मेरी चार पंक्तियाँ--

एक डाल पर खिली हुई थी
इक तितली।
कितने फूल वहां आकर मंडराए थे?

बादल लेटा रहा धूप में देर तलक,
उसके ऊपर इक बदली के साये थे।

ashok@chakradhar.com
4-5-2024